thearyasamaj.org

सांस्कृतिक तकनीक सामाजिक

सांतसा

मासिक मुखपत्र

मधु, चैत्र २०७१ वि., फरवरी–मार्च २०१४ ई.

१,९७,२९,४९,११६ सृष्टि संवत् वर्ष – १७ अंक – १

सांतसा न्यास
प्रसांत भवन, बी ५१२,
सड़क ४, स्मृतिनगर, भिलाईनगर,
जि.दुर्ग, छत्तीसगढ़
✆ ०७८८–२२८४८८४

प्रकाशक/सम्पादक : ब्र.अरुणकुमार "आर्यवीर"
पुनीत प्लाझा, फ्लैट १, प्लॉट १५, सेक्टर ३०,
सानपाडा, नवी मुम्बई, ४००७०५ भारत
✆ ०२२–२७७५०३८३, ७६६६९८६८३७
E-mail : 1aryaveer@gmail.com

<www.santasa.org>

ढोल की पोल है प्रजातन्त्र

चुनावी ढोल और पांच साल पोल। इस कारण से सामान्य जन के लिए कालान्तर में प्रजातन्त्र का कोई अर्थ ही नहीं रह जाता है। कुछ राजनेता पांच वर्ष में एक बार चुनाव ढोल बजा लेते हैं। और कोई जीत जाता है, कोई हार जाता है। लोग अपने–अपने कामों में लग जाते हैं। (साभार प्रजातन्त्र हत्या क्रान्ति)

खूब खूब खूब
डूबा
खुद की गहराई
खुद मैंने न पाई..!
साभार
कविता संग्रह 'स्वयं'

इस अंक में...

मातृ प्रबन्धन.............................. ०२
भारतीय अभियंता भविष्य चुनौतियां.. ०५
पुरोहितम् अध्यापन...................... ०८
आर्थिक औद्योगिक मनुष्य तारकासुर... ०९
भ.गीता में वैदिक नैतिक अवधारण.. १०
स्व–निवेदन (सखूजा घराना)......... १४

नक्षत्र, भाग्य, वास्तु, प्रजातन्त्र और स्वयं से घटिया की पूजा सबसे बड़े दुर्भाग्य हैं।

thearyasamaj.org

मातृ प्रबंधन

प्रबन्धन का अति उच्च प्रकार तथा गहन प्रकार है मातृ प्रबन्धन। अनुसया के द्वार पर तीन ऋषि पहुंचे। उन ऋषियों की विचित्र मांग थी कि अनुसया उन्हे नग्न होकर भोजन कराए। अनुसया एक महान माता थी। अनुसया का अर्थ ही होता है कि जैसा चाहे वैसा बालक वह स्वयं जन्म दे सके। ऋषियों की इच्छा अनुसूया ने पूरी की। कथा भाग है कि अनुसूया ने तीनों ऋषियों को नन्हे बालक बना दिया और नग्न होकर उन्हें भोजन करा दिया। यथार्थ भाग यह है कि अनुसूया ने उन ऋषियों को अपना मातृत्व स्वरूप समझा दिया और स्वंय मातृत्व भाव ओत प्रोत होकर उन्हें शिशुवत समझकर भोजन करा दिया। कथा सारांश है माता बुजुर्गों से बड़ी होती है। मातृत्व जैसा चाहे वैसा बालक गढ़ सकता है।

ये दोनों तत्व मातृत्व प्रबन्धन के सार तत्व हैं। १) बडप्पन। २) कर्मचारी गढन। बडप्पन से ही कर्मचारी गढन हो सकता है। यह तथ्य “विश्व प्रबन्धन” आज कुछ सीख रहा है। सच्चा प्रबन्धक या प्रशासक या नेता- जैसा चाहे वैसा सहयोगी गढ़ सकता है कि वह संपूर्ण व्यवस्था का शत प्रतिशत मालिक हो। अनुसया अपनी व्यवस्था की शत प्रतिशत मालिक थी।

अनुसया शब्द का एक अर्थ है पुरोहितम्। शिशु को अन्तःपुर में निकटम रखते उसे सुनिर्माण की हितपूर्वक सोचते जो माता उसके जन्म से लालन-पालन की व्यवस्था करती है वह पुरोहितम् होती है। ऐसी सुनारी ही माता होती है। उपरोक्त परिभाषा में मातृत्व प्रबन्धन का सार दिया हुआ है। १) अन्तःपुर में निकट कई रखते इसमें कर्मचारी को भी यह अहसास होना आवश्यक है कि वह माता के निकट है।

वर्तमान प्रबन्धन के कई गुर इस तथ्य की पुष्टि करते हैं यथा- १) कभी कभी सहायको के साथ बैठ गप-शप करनी चाहिए। २) सबको प्रथम नाम लेकर बुलाना चाहिए। ३) उनकी पीठ थपथपाना चाहिए। ४) उनके परिवारी सम्बन्धी पुछताछ रखें। ५) विरादरी पन आदि।

वे प्रबन्धक सफल होते हैं जो अपने मातहतों को यह विश्वास दिला

thearyasamaj.org

देते हैं कि वे उनके बहुत निकट हैं। मातहत वर्षों तक नहीं जान पाते हैं कि कुशल प्रबन्धक किसके निकट है। कुशल प्रबन्धक मात्र अहसास दिखाते हैं, लेकिन निकट होते नहीं हैं। माता वास्तव में निकट होती है।

२) सुनिर्माण :- हर कर्मचारी एक नियत समय पर एक विभाग मे जन्म लेता है। उसके विभाग में जन्म लेते समय प्रबन्धक को सर्वाधिक सावधान रहना चाहिए। जिस प्रकार मां बच्चों को प्रारम्भिक दिनों में देखभाल करती है उसी प्रारम्भिक अवस्था में कर्मचारी का निर्माण सुनिर्माण होता है। दूसरी बात मातृ प्रबन्धन में यह ध्यान देने कि कर्मचारी का निर्माण सतत होता ही रहता है।

३) सुरक्षितम् :- माता अपने शिशु (गर्भस्थ को भी) अधिकम सुरक्षितम् रखती है। इस प्रकार प्रबन्धक का दायित्व है कि अपने मातहतों को बाह्य के असुरक्षित तत्वों से सुरक्षित रखे तथा कोई भी बाह्य उसे नुकसान न पहुंचा सके।

४) हित पूर्वक :- व्यवस्था में कार्य करते समकक्षों से कर्मचारी यदि कहीं भी अधिक है तो हर स्थिति लाभ मिलना ही चाहिए। हक लाभ तत्काल मिलना चाहिए। बच्चे को दूध मिलना ही चाहिये। हित पूर्वक एक अति कठिन प्रबन्धन अंग है।

५) जन्मन, लालन, पालन :- विभाग में जन्मन दाता प्रबन्धक ही है। इसके पश्चात, कर्मचारी का लालन पालन विभाग में ही होना चाहिए। कर्मचारी को अपनी आवश्यकता पूर्ति के लिए बाह्य विभागों में न भटकना पडे।

६) बडप्पन पूर्वक गठन में एक तत्व सर्वाधिक प्रभावशाली रूप में कार्य करता है। यह तब होता है जबकि कर्मचारी आश्वस्त हो जाता है कि इस विभाग में कार्य करना सुखद अनुभव है। "मां के पग तले स्वर्ग है" आश्वस्ति भावना आदर्श स्थिति है। "विभाग में सहज सरल सन्तोष" आश्वस्ति कार्य वातावरण बदल देती है।

मेरे विभाग में कार्याधिक्य से उत्पन्न असन्तोष के कारण एक उथलपुथल हुई। महा प्रबन्धक (परियोजनांए) से इस पर चर्चा हुई। उन्होने कहा- मैंने तो कम धर्म पढ़ा है पर रामकृष्ण को पढ़ा है उन्होने कहा है- मां जैसे अपने विभिन्न रुचि के बच्चों को उनकी भावना देखते सन्तुष्टि देने का प्रयास करती है वैसा प्रयास करना चाहिए।

thearyasamaj.org

यह महा प्रबन्धक (परियोजनाएं) की बडी उदात्त सद्भावना है। कार्यालयीन कार्यों में इसे व्यवहार स्तर तक लागू करना आवश्यक है, क्योकि यह नियत विभिन्न परिवर्तित लक्ष्यों को समयबध्द रूप में पूरा करने का सामर्थ्य रखता है। गृह में परिवार व्यवस्था में ऐसा नहीं है। वहां लक्ष्य सीमित नियत असमयबध्द कार्य तथा उद्देश्य दोनों की दृष्टि से है।

मातृ प्रबन्धन की सफलता की कुछ शर्तें हैं-

१) प्रबन्धन क्षेत्र के लोग सांस्कृतिक सामाजिक हों।

२) निहित स्वार्थ में न बन्धे हों। कम से कम नोकरी पेशा होने पर उनके बाह्य व्यवसाय न हों।

३) लोग परिष्कृति उत्सुक हों।

४) लोग कृतघ्न न हों। अहसान फरामोशी मातृत्व प्रबन्धन को टुकड़े टुकड़े करके रख देती है।

५) लोग देश और कार्य से उतना प्यार तो कम से कम करें जितना उन्हें हाथ में वेतन या मूल वेतना मिलता है।

मेरे व्यक्तिगत जीवन के नोकरी के पैतींस वर्ष विभागाध्यक्ष रहने के अनुभव में उन्नीस सौ तिरसठ में दो सौ सत्तर के करीब स्टाफ तथा सबसे कठिन चुनौती राजहरा में जल प्रदाय का कार्य मैंने अनजाने में मातृ प्रबन्धन सहारे सर्वोत्तम रूप में तथा उन्नीस सौ सडसठ-सत्तर (करीब) में पी.एम.डी.सी. का कार्य तथा उन्नीस सौ छियासी से पचानब्बे सुरक्षा विभाग का कार्य प्रबन्धन के तत्वों के अनुरूप सौ कियासी पन्चानवे सुरक्षा विभाग कार्य मातृ प्रबन्धन के तत्वों के अनुरूप चलकर ही उत्तम रूप में किया।

सामाजिक जीवन में प्रसांत संसद के शिविरों के तथा कभी आर्य कुमार सभा के कार्यों की सफलता का रहस्य उनमें मातृ प्रबन्धन अंश ही है।०

ममत्व का सकार रूप माता है। मां के पग तले स्वर्ग है। माता कुमाता नहीं होती। माता प्रथम पुरोहित है। मातृ देवो भव। त्वमेव माता। माता धरा से भी महत्वपूर्ण हैं- ये सब मातृत्व प्रबन्धन के गुर हैं जिनसे प्रबन्धन पाक होता है।

स्व.डॉ.त्रिलोकीनाथ जी क्षत्रिय

पी.एच.डी.(वेद), एम.ए.(आठ विषय), सत्यार्थ शास्त्री, बी.ई., एल.एल.बी., डी.एच.बी., पी.जी.डी.एच.ई.,एम.आई.ई., आर.एम.पी. (१०७५२)

thearyasamaj.org

"भारतीय अभियंता – भविष्य चुनोतियां"

अमेरीका ब्रिटेन अभियांत्रिकी के पीछे भागता जापान तकनीकी विश्व श्रेष्ठ हो गया है। जर्मनी विश्व तकनीक में द्वितीय हो गया। भारत पीछे से और पीछे रह गया। अपवाद है कि कृषि अभियात्रिकी.. धन्यवाद डा स्वामी नाथन का उस ऋषि का जिसने कपिल, गावस्कर, अमिताभ, गोविन्दा, अटल, देवेगौडा से भी ज्यादा ऊंचा विश्व में भारत का नाम किया। पर भारतीय औसत जनता उसे नही जानती बाकी सब को है जानती।

डॉ.स्वामीनाथन हैं भारतीय अभियन्ता उसका ऋषि जीवन है भारतीय संस्कृति भूमि जुड़ा। धरा भूख निवारण उसका प्रयास उसका ब्रह्मयज्ञ है। महत फल सब्जी अनाज उसके ब्रह्मयज्ञ की उपज है।

वर्तमान औसत भारतीय अभियन्ता की एक वाक्य में परिभाषा है– "कही की ईंट कहीं का रोडा, भानुमति ने कुनबा जोडा।" यदि भारतीय अभियन्ता न सम्हाला तो वह दिन दूर नहीं जबकि वह होकर रह जाएगा चुं चुं का मुरब्बा, न घर का न घाट का। अभी भारतीय अभियन्ता न घर का घाट का। कभी जापान घाट, कभी जर्मनी घाट, कभी लंदन घाट वह घाट–घाट घुम है। जिस दिन यह गंगा युमना सरस्वती घाट पानी पिएगा, यह घर का होने लगेगा।

वर्तमान भारतीय अभियन्ता के सन्मुख निम्न बडी चुनोतियां हैं– १. विश्वीकरण, २. बहुराष्ट्रीय संस्थान प्रभाव, ३. तकनीकी नवीनीकरण, ४. उदात्तीकरण, ५. तकनीकी ज्ञान का विश्वीकरण, ६. तकनीकी विश्व में संस्कृति प्रवेश, ७. पर्यावरण ह्रास, ८. समुचित प्रशिक्षित मानव संसाधन विकास, ९. चालीस प्रशिक्षित निर्धनता, १०. बहत्तर प्रतिशत झोपडी निवास।

इतनी बडी चुनौतियां और आयातित अर्ध ज्ञानयुक्त अपनी धरा टूटा क्लब पार्टी जुड़ा भारतीय अभियन्ता। यह इतना बड़ा प्रश्न चिन्ह है कि लखनऊ की भूलभुलैया यहां मात है। क्या इस प्रश्न का कोई उत्तर है..? उत्तर है सरल सा। भारतीय अभियन्ता को आयातित अर्धज्ञान के साथ भारतीय सांस्कृतिक सामाजिक तकनीकों के पूर्ण ज्ञान से युक्त कर भारत धरा से जोड़ दिया जाए। इस पूर्ण ज्ञान का प्रारूप यहां दिया जा रहा है–

thearyasamaj.org

स्वास्थ्य : हम कम से कम शत वर्ष स्वास्थ्य तथा स्वनिर्भर रहते ब्रह्म गुणों से आपूर्त स्वयं को करके जिएं, देखें, सुनें, बोलें, होवें।

सारे विश्व के औद्योगिक स्वास्थ्य मानकों का उपरोक्त सर्वोच्च माप है जिसकी ओर मानव जाति प्रवास कर रही है।

पर्यावरण : १) समस्त द्युतिशील पदार्थ (सूर्य, चांद, तारे, मोमबत्ती, बल्ब आदि), २) सम्पुर्ण अन्तरिक्ष- वातायन, ३) समस्त आधार तल, ४) समस्त प्रवहणशील पदार्थ (ताप, तरलता, इलेक्ट्रान, किरणें आदि), ५) समस्त औषधी व्यवस्था, ६) वनस्पति व्यवस्था, ७) द्यौ-अन्तरिक्ष-भूदेव संयुक्त व्यवस्था, ८) सर्व सामंजस्य में स्थैर्य एवं सन्तुलन मानव को सरलतः उपलब्ध हो।

सुरक्षा : १) बोध (प्रत्यक्ष ज्ञान), २) प्रतिबोध (अवचेतन ज्ञान तथा सहज क्रियाएं) या विज्ञान द्वारा तू रक्षित। ३) अस्वप्न = न देखना, दिवा स्वप्न या स्फूर्ति या उत्साह तथा ४) अस्वद्राण = अविचलन, स्थिरता, नियम दृढता द्वारा तू रक्षित। जागृति = जागृत मन, जागृत इन्द्रियां तथा गोपायन = शक्तियां रक्षक हैं तथा हमेशा बचाते हैं।

पुरुष : वाणी मे ऋग्वेद, मन में यजुर्वेद, प्राणों में सामवेद तथा इन्द्रियों में अथर्ववेद रचा-पचा हो। सम्पूर्ण अस्तित्व ऋत की नाभि (ब्रह्म) से सहज संयुक्त हो।

अघोर : हमारे लिए पृथ्वीलोक, अन्तरिक्षलोक तथा द्युलोक स्थैर्य सन्तुलन से भरपूर हो। जल औषधिवा वनस्तितिया दुखदा स्र्थयइ पूर्व हो। संपूर्ण देंव व्यवस्था एंव दिव्य गुण व्यवस्था नपूर्ण विद्वान शांति भी उपद्रव रहते हो।। स्र्थव एंव संतुलन से। पर्यावरण के। अज्ञान का, भयंकर का, घोर का, क्रूर का, पाप का शमन तथा नष्टीकरण हो तथा कल्याण स्वरूप अघोर, अपाप, ज्ञान, अक्रूर प्राप्त हो।

कार्यसमूह : १) शक्तिमय, २) श्रेष्ठ, ३) तेजोमय, ४) निश्चय युक्त सम्मिलित एकत्रित, ५) वाक् (परा, पश्यन्ती, मध्यमा, वैखरी) प्रकाशित, ६) रहन सहन समृद्ध, ७) एकत्व प्रगति, ८) उत्तम संवाद, ९) संज्ञानी मन संस्कारित, १०) पूर्व स्थापित के समान श्रष्ठ आचरण, ११) एक विचार, १२) एक सभा, १३) एक विचार युजित मन, १४) एक चित्त, १५) एक उद्देश्य दीक्षित, १६) एक हविषमय (अन्न उपभोगमय), १७) एक ध्येय,

thearyasamaj.org

१८) एक हृदय, १९) सम मन, २०) उत्तम शक्ति, २१) समान भाव।

मधुमय : शालि, गेहूं, जौ, श्यामक मुद्ग आदि खाद्य पदार्थों में भरा है, वायु सरिताएं मधुवर्षा करती हैं, रात्रि मधु है, धरा-रज मधु है, आकाश से झरती बूंदें मधुमय हैं, द्यौलोक मधुमय है, वनस्पति मधुमयी, सूर्य मधुमय, कार्य प्रेरण मधुमय है, इन्द्रियां वाणियां मधुमय है, मधुमय है ऋतायन (ऋत का घर वा सम्पूर्ण सत्य सुशोभित हूं यह मैं)।

अभय : द्यौ, पृथिवी, दिन-रात्रि, सूर्य-चन्द्र, ज्ञान, शौर्य, ऋत-शृत, भूत भविष्य डरते नहीं हैं, नष्ट नहीं होते हैं। इसी प्रकार मेरे प्राण अभय हैं।

नोकरी पात्रता : १) परिवीत :- त्रि ऋण उऋण भावमय, नियम सेवित, विद्या-शिक्षा सुशोभित, २) सुवासा :- उत्तम त्रि शरीर मय सुवस्त्र धारित, ३) युवा :- पूर्ण युवा, ४) द्विजन्मा :- आचार्य आश्रम गर्भ में आचार्य निकटतम रह अधिकतम हित योग्य- पुरोहितम्- दक्ष क्रिया, ५) श्रेयान :- अतिशय शोभायुक्त- मंगलकारी, ६) स्वास्य :- उत्तम ध्यान युक्त, ७) विज्ञान द्वारा विद्या वृध्दि भावनामय, ८) धैर्य युक्त, ९) कवि- क्रान्त दर्शी, १०) उन्नतिशील, ११) समावर्तनी -नोकरी क्षेत्र में समरूपता से प्रवेश करता है, १२) अस्तित्व पहचान संकट मुक्त याने स्व सटीक पहचान युक्त।

नेतृत्व : १) व्यक्तिगत शौर्य आदर्श, २) व्यक्तिगत शौर्य व्यवहार, ३) आदर्श लक्ष्य, ४) व्यवहार लक्ष्य, ५) आदर्श समूह, ६) व्यवहार समूह (जॉन आफ्टर एडेयर के डेव्हलप इन्डिविज्युअल, एक्टीव टास्क तथा बिल्ड टीम से तुलनीय) का प्रशंसनीय बुद्धियों- ऊंगलियों के क्रम-अनुक्रम प्रयोग से नेतृत्व होता है। पांच ऊंगलियां पंचसमूह = १) अंगुठा = ज्ञान समूह, २) तर्जनी = शौर्य समूह, ३) मध्यमा = संसाधन समूह, ४) अनामिका = शिल्प समूह, ५) छोटी = सेवा समूह का कार्य अभिकल्पना में चुटकी, कार्यारम्भ में - लिखना, यत्नावस्था में चुनना, प्राप्ताशा (मध्य) अवस्था में लड्डू बनाना, नियताप्ति में घुग्घू बजाना तथा फलागम में गिलास पकड़ना उपयोग क्रमशः कार्यारम्भ में धीर प्रशांत, यत्नावस्था मे धीर ललित, प्राप्ताशा में धीर उद्धत, नियताप्ति में धीरोदात्त, फलागम में धीर प्रशांत नायक द्वारा प्रयोग नेतृत्व है।

पुरोहितम् : पुरः = अन्तस में घिरा हुआ सुरक्षितम निकट, हितम् = श्रेष्ठ कल्याण। जो निकटतम सुरक्षित रखते हुए अधिकतम भला करे। प्रथम

(...शेष पृष्ठ १३ पर देखें)

thearyasamaj.org

पुरोहितम अध्यापन

गहनतम पहुंच कर जीवन यापन सिखाना अध्यापन है। हर मानव में अव्यक्त ज्ञान का सागर भरा हुआ है। पर हर मानव जीवन यापन में एक गागर है। पुरोहितम् इस गागर को बड़ी करने का पथ बता सकता है आदमी को अपनी गागर स्वयं ही बड़ी करनी होती है। हर आदमी अलग अलग आकार की गागर में अव्यक्त ज्ञान को व्यक्त करता है। गागर चार खण्डीय है- वाक्, प्राण, मन और इन्द्रिय। अदभुत है ये चार खंड। वाक् खण्ड में भरना है बिंदु से आकाश तक का ब्रह्माकाश तक का विज्ञान। यथावत पंच परीक्षित विज्ञान का वितान बहुत बड़ा है। मन खंड मे भरना है कर्म वितान। कर्म करते ही जी। श्रम, तप, ज्ञान, ऋत, शृत, श्रद्ध सजा कर्म यशोमय होता है तथा मानव को समृद्ध करता है। प्राण खण्ड में आह्लाद भरना है। ब्रह्म भाव से गदगद हो जाना पूरे तन मन इन्द्रिय में एक आल्हाद भर देता है। प्राण ही आधार है पोर पोर में शक्ति उत्सर्ज काआनन्द भरा प्राण पोर-पोर में सौम्य, सहज, सम, संतुलित शक्ति उत्सर्ज करता है। इन्द्रिय खंड बडा ही चंचल है यह पीपरपातवत तनिक सी एषणा हवा में डोल जाता है इसलिए इन्द्रिय खंड में अथर्व भरना है।

पुरोहित वह है जो शिष्य पुर में सर्वाहित भाव उदात्त भर दे। मानवता देवी, ज्ञान भैया, श्रम बहना, धरती मैया, सत्य जीवन साथी, जय विश्व मंत्र बीज रूप में शिष्य के पुर में रच-पच जाए यह पुरोहित दायित्व है। इन बीजों का विकास मानव को स्वयं करना है। वाक प्राण मन इन्द्रिय का एक नाम गो भी है। गुरु 'गो' को सटीक वेद-विद् करना बताता है। सच्चा गो-विन्द तो मानव को स्वयं बनना है। गोविन्द उस व्यक्ति का नाम है जिसके गो उसे पूर्ण रूप से ज्ञात हैं और ज्ञान कर्म उपसाना और शान्ति आभर हैं।

आचार्य चतुर्भर होता है तो शिष्य भी आचार-भर होता है। पुरोहितम् आचार्य शिष्य के पुर में या अंतस में निकटतम रहते उसे अपने वात्सल्य और प्रेम से भरते उसका अधिकतम हित चाहते करते उसकी पुर गागर में जागृति उन्नति उत्थान भर देता है, यही सच्चा अध्यापन है जो कालांतर में स्वाध्यापन में बदल जाता है और शिष्य गुरुबोल से टूटकर सुगंधि पुष्टि मिठास से भरा होकर पहले समाज फिर ब्रह्म समर्पण का पात्र हो जाता है।

-स्व.डॉ.त्रिलोकीनाथ जी क्षत्रिय।

thearyasamaj.org

आर्थिक औद्योगिक मनुष्य तारकासुर

प्राकृतिक पर्यावरण मे एक स्वतः संतुलन व्यवस्था है। आज से सौ सवा सौ वर्ष पूर्व तक (औद्योगिक युग पूर्व में) मानव क्रियाओं से प्राकृतिक पर्यावरण में सीमित क्षेत्र में स्वतः संतुलन थोड़े समय के लिए बिगड़ता था तथा स्वयं ही ठीक हो जाता था। औद्योगिक युग के आरम्भ के साथ ही जन्म हुआ आर्थिक औद्योगिक मनुष्य का। आर्थिक औद्योगिक मनुष्य मूलभूत रूप में स्वार्थी, सुविधा–भोगी, छली, प्रगतिशील, हिरण्यनयन और चकाचौंधप्रिय है। इसने पर्यावरण भक्षण शुरू कर दिया।

आर्थिक औद्योगिक मनुष्य का भान कालिदास को भी था। इसका वर्णन वे इस प्रकार करते हैं– इसके नगर सूर्य इतना ही तपता है जो इसकी बावलियों में कमल खिलाने के लिए पर्याप्त हो। इसके डर वायु बगीचों में घूमना छोड़ इसके पास पंखे की हवा से अधिक नहीं बहता। छः ऋतुएं अपनी क्रमिक सेवाक्रम को छोड़कर एक साथ होकर पुष्पादि जुटाने में आसक्त होती उद्यान पालकों के समान इसकी सेवा करती हैं। जिन नन्दन वन के तरु–पल्लवों को देवागंनाए अपने हाथों से दया पूर्वक कोमलता से चुनती थीं उन्हें यह काट–काट कर गिरा रहा है। इसने सूर्य के अश्वो के विचूर्णित सुमेरू पर्वत के शिखरों को उखाड़ कर अपने गृह मे विहार पर्वत बना लिया है। (कुमारसम्भव २/२३/२३)

आधुनिक आर्थिक औद्योगिक मानव का स्वरूप इससे अधिक ही है। इसके कमरे मे धुंधलाए कांचों से छना सूर्य प्रकाश है जो गुलदस्ते में सजे फूलों पर पड़ता है। कक्ष वातानुकूलित है। वातानुकूलन छः ऋतुओं पर कब्जा करने के लिए है। इसका कक्ष सागौन की सर्वोत्तम लकड़ी के कुर्सी टेबलों से तथा दीवार पैनलों से सजा है जो हरित पेड़ काट–काट कर बना है। सूर्य गरमियो से उगे पौधे इसके कक्ष में गमलों की शाभा बढ़ा रहे हैं।

कालिदास ने इस मानव को "ढीठ तारक नामक अमंगलसूचक महादैत्य धूमकेतु तारे के समान विश्व संकट के लिए उठा हुआ कहा था। (कुमारसंभव २१/३२) कुमारसंभव के एक तारकासुर से ऋषि चिन्तित थे। आज हर नेता, हर इंजीनियर, हर कम्पनी विभाग प्रमुख तारकासुर है।

–स्व.डॉ.त्रिलोकीनाथ जी क्षत्रिय।

thearyasamaj.org

भगवद गीता में वैदिक नैतिक अवधारणा

वैदिक उपासना में कर्म, ज्ञान एवं भक्ति का समन्वय है। ब्राह्मण कर्म मीमांसा, उपनिषद आत्म-दर्शन, सांख्य सृष्टि-विज्ञान, योगदर्शन वृत्ति-निरोध एवं स्मृतियां समाजशास्त्र के ग्रन्थ हैं ये समस्त ग्रन्थ वेद काल एवं गीता को आपस में जोड़ते हैं। वाद प्रतिवाद संवाद वैचारिक इतिहास का एक क्रम है। आदि ग्रन्थ वेदों के पश्चात आरण्यक एवं ब्राह्मण ग्रन्थों के वाद पर उपनिषद दर्शन एवं स्मृति प्रतिवाद यदि माना जाए तो गीता की विचारधारा संवाद कही जा सकती है।

ब्रह्मानुभूति के विषय उपनिषदों में दर्शाए गए पथ की तुलना में गीता अधिक व्यावहारिक दृष्टिकोण प्रदर्शित करती है। उपनिषदों में सत्य का श्रवण उस पर मनन चिन्तन एवं निदिध्यासन ब्रह्म प्राप्ति का मार्ग दर्शाया गया है। लकिन गीता यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय के समान कर्म एवं चिन्तन के समन्वय पर बल देती है। यजुर्वेद की प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मणे तथा न लिप्यते नरे भावना गीता में अहं क्रतुरहं यज्ञः अर्थात् मैं ही श्रौत कर्मों का स्वरूप हूं, मैं यज्ञ में हूं के रूप में हुआ है। यजुवेद की विश्वायुः विश्वकर्मा विश्वधाया भावना गीता से साकार हुई है।

वेदों के समान गीता का परम लक्ष्य भी ब्रह्म है। इस ब्रह्म तक जाने का रास्ता कर्ममय जगत से होकर ही जाता है। कर्ममय जगत का स्व-धर्म, सहज कर्म, नियत कर्म, स्वभावज कर्म इत्यादि शब्दो में किया गया है। परन्तु इस कर्म व्यवस्था का लक्ष्य नैष्कर्म्य सिध्दि की प्राप्ति है। स्वभाव नियत कर्म वर्णाश्रम धर्म पर आश्रित होने के कारण समाज सेवा के स्वरूप को भी प्रदर्शित करते हैं। गीता का दृष्टिकोण सम्यक् है।

वेदों के सम्यक् दृष्टिकोण की गीता में जगह जगह पुनर्स्थापना की गई है। यजुवेद ३५/१० में संरभध्वम् उतिष्ठत प्रतरता अर्थात् सम्यक् आरंभ कर उद्यत होते हुए दुःख निवृत्त हो, आनंद प्राप्ति हेतु अग्रसर होने के निर्देश हैं। इसी वेद के समीक्षन्ताम्, समीक्षामहे, समीक्षे यजुवेद ३६/१८-२२ शब्दों द्वारा सम्यक् दृष्टिकोण अपनाया गया है। इस भावना का गीता में विकास समं सर्वेषु भूतेषु तिष्ठति परमेश्वरम्। विपाश्यत्स्वविनश्यन्तं यः पश्यति स पश्यति गीता १३/२६ में दिया गया है। वैदिक नैतिक अवधारणा

thearyasamaj.org

का आधार भी समस्त प्रजाओ में पिरोया सूत्र का सूत्र परमातमा है तथा इसे जानना ही ब्रह्म जानना है।

वेद में ब्रह्म से प्रार्थना की गई है कि "ते संदृशि ज्योक् जीव्यासम्" यजुर्वेद ३६/१६ अर्थात् हम तेरे सम्यक् ज्ञान में निरन्तर जीवन यापन करें। परमात्मा का सम्यक् ज्ञान यही है कि वह सारी की सृष्टि में व्याप्त उसका नियंता है। मात्र उसके आधार से ही चल-अचल प्रकृति नियमबध्द है तथा इस तथ्य को जानते हुए उसके अनुरूप अपने जीवन को बनाना वैदिक नैतिकता को अभीष्ट है। गीता में भी प्रकृति जीव एवं ब्रह्म का समन्वय कर साम्यभाव की स्थापना १३/३० में इस प्रकार की गई है- "यदा भूत पृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति। तत एव च विस्तारं ब्रह्म संपद्यते तदा।" अर्थात् यह पुरुष जिस काल में भूतों के विभिन्न भावों को एक परमात्मा के संकल्प के आधार स्थिति देखता है उसे काल में सच्चिदानन्दघन ब्रह्म को प्राप्त होता है।।

समन्वयात्मक दृष्टिकोण के कारण ही गीता व्यवहार के धरातल से जुड़ी हुई है। जहां उपनिषद अहं ब्रह्मास्मि तत्त्वमसि आदि भावना अपनते हैं वहां गीता स्वधर्म के माध्यम से चराचर जगत में विस्तृत सम ब्रह्म की अनुभूति की ओर अग्रसर करती है। आदि शंकरचार्य इन्हीं व्यवहारिक अध्यात्म भावों को इन शब्दो में कहते हैं- प्रवृत्ति धर्म द्वारा चित्त शुध्द कराके अन्ततः निवृत्ति धर्म की और ले जाने वाला यह गीता शास्त्र समस्त पुरुषार्थों को सिध्द कराने वाला है।

अभ्युदय और निःश्रेयस दोनों की प्राप्ति का व्यवहार धर्म वैदिक विद्या अविद्या समन्वय तथा सम्भूति असम्भूति समन्वय का जीने योग्य स्वरूप है। अभ्युदय सांसारिक उन्नति ही जिसका फल है ऐसा जो प्रवृत्तिरूप धर्म वर्ण और आश्रमों आदि को लक्ष्य करके कहा गया है। यह भी फल कामना छोड़कर ईश्वरार्पण बुध्दि से किया जाने पर अन्तःकरण की शुध्दि करता है। शुध्दान्तःकरण युक्त पुरुष आत्मा की शुध्दि द्वारा समस्त पुरुषार्थों को सिध्द करता है तथा निःश्रेयस प्राप्त करता है।

गीता के तत्वज्ञान का शिखर ब्रह्मपुरुष या पुरुषोत्तम है। हे अर्जुन तू ऐसा समझ कि सम्पूर्ण भूत परा एवं अपरा प्रकृतियों से ही उत्पत्तिवाले हैं

thearyasamaj.org

और मैं सम्पूर्ण जगत का उत्पत्ति और प्रलयरूप हूं। इस तत्वज्ञान के विकास के बीज ऋग्वेद के हिरणयगर्भ सूक्त और नासदीय सूक्त जो कि सृष्टि-गीत है में है। नासदीय सूक्त की प्रौढ़ विचारों के कारण महत्ता जहां मैक्डॉनल स्वीकारते हैं वहीं डूसन इसकी उदात्त सरलता तथा दार्शनिक उच्चता के प्रशंसक हैं।

गीता के ब्रह्म या पुरुषोत्तम को जीवन में प्राप्त किया जा सकता है। परन्तु इसकी कुछ पूर्व शर्तें हैं जो गीता के दूसरे अध्याय में स्थितप्रज्ञता पाने से पहले दी गई है। निस्त्रैगुण्य आत्मवान् २/४५, सिद्धय सिद्धयोः समोभूत्वा समत्वं योग उच्यते २/४८, मा फुलेष कदाचन २/४६, योगः कर्मसु कौशलम् २/५० तथा निर्वेदं श्रोतव्यस्य श्रुतस्य च। इन स्थितियों को जीवन में साधने के पश्चात साधक आत्मवान, निर्वेद, सम, समाहित और आत्मावस्थित हो जाता है। वह समस्त मनोकामना त्यागी, आत्मसन्तुष्ट, दुःख में उद्वेगरहित, सुख की स्पृहा रहित, स्नेह अस्नेह सम, ममतारहित, अहंकार रहित, शांतिमय ब्रह्म को प्राप्त होता है। गीता २/५५ से २/७२

ऊपर दिए स्थितप्रज्ञ पुरुष का वेद के अथर्वा पुरुष से गीता में विकास हुआ है। वैदिक अथर्वा हृदय एवं मूर्धा के युजन पश्चात इनसे परे विचरण करता है। वह अकामो धीरो अमृतः स्वयम्भू रसेन तृप्तो न कुतश्चनोनः नमित याने न्यून नहीं है।

हर मानव को स्व आधारित महान बनाने के वैदिक लक्ष्य को गीता पूर्णता तक विकसित करती है ताकि वह व्यवहार धरातल पर भी उतरे। स्व आधारित कर्ममय पुरुष का स्वरूप गीता के तीसरे अध्याय में है। कर्मयोगसक्तः स विशिष्यते तथा नियतं कुरु कर्म द्वारा गीता कर्मयोगी को श्रेष्ठ विशिष्ट मानते हुए शास्त्रविधि से नियत स्वधर्मरूप कर्म करने के निर्देश देती है। गीता की कर्म योजना व्यापक अर्थयुक्त है। कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्मासरसमुद्भवम्, तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम्। कर्म वेद से और वेद ब्रह्म से उत्पन्न हुआ है अतः परम अक्षर परमात्मा सदा यज्ञ में प्रतिष्ठित है।

गीता का मूलभूत सिद्धान्त है निष्काम कर्मयोग, भक्तियोग, सर्वभूतहित। विवेकपूर्ण अभ्यास से परमेश्वर स्वरूप का अनुमान ज्ञान, अनुमान ज्ञान से

thearyasamaj.org

ब्रह्म स्वरूप ध्यान श्रेष्ठ है। तथा उससे भी कर्मफल-त्याग श्रेष्ठ है। गीता १२/१२। इस कर्मफलत्याग को प्राप्त करने वाले के लिए देहात्माभिमान से रहित होना तथा परमार्थ ज्ञानी होना आवश्यक है। परमार्थ ज्ञानी ब्रह्मध्यानी ही कर्मफल त्याग कर सकता है। ऐसे साधक के कर्म पूज्यतम होंगे ही। गीता के उपरोक्त कर्मभक्ति योग के बीज ऋग्वेद के १/६२/६ मन्त्र में है।

इस प्रकार गीता के धर्म के विकास विस्तार के बीज वेदों में है। गीता तथा वेदों के आचार धर्म की आदर्शावस्था स्थितप्रज्ञ या अर्थव होना है। स्थितप्रज्ञ अवस्था या अथर्व अवस्था कोई निष्क्रिय अवस्था नहीं है। इस स्थिति में साधक की इन्द्रियां कार्य करती हैं लेकिन साधक शान्तावस्था में होता है। वह कर्मों में लिपायमान नहीं होता है। वेद इसे ही निष्काम कर्मों को करते हुए सौ वर्ष जीने की "न कर्म लिप्यते" स्थिति कहता है।

-स्व.डॉ.त्रिलोकीनाथ जी क्षत्रिय

(पृष्ठ ७ का शेष...भारतीय अभियन्ता भविष्य चुनौतियां)

पुरोहित है माता। गर्भावस्था में शिशु को गर्भ में निकटतम सुरक्षिततम रखते उसको स्व-नाल से आहार, वायु देती, मन ही मन उसकी सुख कल्पना बुनती, उसका भला करती। द्वितीय पुरोहित है आचार्य। आश्रम गर्भ में शिशु को धारण कर, आश्रम व्यवस्था में उसका पोषण कर, उसे निकटतम रखता समावर्तनी के रूप में दूसरा जन्म देता। वर्तमान शिक्षा व्यवस्था हर पीरियड शिक्षक बदलती अपुरोहितम् है।

कार्य परिस्थितिकी : ऋत्विज- ऋतु ऋतु की संधियों का ज्ञाता, एवं उसके अनुसार यथावत व्यवहार नियोजक, वैज्ञानिक दृष्टिमय। (निमेष, काष्ठा, मुहूर्त, प्रातः, सन्ध्या, दिवस, सप्ताह, पक्ष, मास वर्ष, शत वर्ष, युग, ब्राह्म दिन-रात, परान्त तक समय विभाजन संधियां हैं) इन संधियों पर विशेष यज्ञ विधान हैं तथा इष्टियां हैं तथा कार्य प्रवृत्ति है। दैनिक कार्य प्रवृति इडा, पिंगला, सुषुम्णा चलने के आधार पर हैं, तन संधियों हेतु आसन हैं, चक्र संधियों हेंतु आसन है। चक्र संधियों हेतु ध्यान प्रक्रिया है, यज्ञेन आयुः कल्पताम् है। यह ऋत्विज विज्ञान कार्य परिस्थितिकी का सर्वोच्च माप है।

-स्व.डॉ.त्रिलोकीनाथ जी क्षत्रिय।

thearyasamaj.org

स्व – निवेदन (सखूजा घराना इतिहास)

हमारा घराना एक महान सांस्कृतिक सामाजिक आर्थिक योजना है। यह दो भाई परम्परा रहा है। पूरे घराने में एक छोटा सा अपवाद छोड़ दो भाई परम्परा कायम रही है। यह भी आश्चर्यजनक सत्य रहा है कि छोटा भाई सौम्य धार्मिक अपेक्षाकृत अधिक पढा लिखा सांस्कृतिक सामाजिक रहा है। बड़ा भाई अपेक्षाकृत कम पढा लिखा व्यापार संभालता आर्थिक सम्पन्न रहा है।

जहां तक मेरे स्मरण में है, मेरे पर-परदादा श्री गंडाराम जी सखूजा के दो पुत्र थे। उनके छोटे पुत्र मेरे परदादा श्री प्रधानचंद जी अत्यधिक धार्मिक प्रवृत्ति के सामाजिक व्यक्ति थे। वे शतवर्ष से अधिक समय तक जीवित रहे। मृत्यु के समय भी अशिथिल अंग चैतन्य रहे। धर्म चर्चा करते करते उनकी मृत्यु हुई थी। उनके दो पुत्र थे एक श्री चन्दनलाल जी सखूजा बड़े जो व्यवसायी हुए। दूसरे छोटे श्री चन्द्रभान जी सखूजा मेरे दादा जी उस समय के आठवीं पास, धार्मिक तथा प्रकृतिप्रेमी थे। वे ग्रामों में धर्म-प्रचार करते थे। एक प्रातः धर्म प्रचार के सिलेसिले में गांव जाते समय उनकी नहर पार करते डूब कर मृत्यु हो गई थी। हमारे घराने में किंवदन्ती प्रसिद्ध है कि मैं अपने इसी दादा का रूप धर के इस घर आया हूं। यह एक और तथ्य है कि मेरी बड़ी भतीजी विभा जो बचपन में मेरे काफी अधिक घनिष्ट रही है, उसके और मेरे जीन संबंध अधिक घनिष्ट हैं। क्योकि उसकी आंख के किनारे बिल्कुल वैसा ही तिल है जैसा मेरी आंख के किनारे है। उसमें भी दादा अंश है।

हमारे घराने की एक और विशिष्टता यह रही है कि बडे भाई में स्पष्ट शिक्षा तथा व्यवसाय अलग होते हुए भी आर्थिक अलगाव या विभाजन एक अपवाद को छोड़ कर कभी नहीं हुआ। श्री चन्दभान के दो पुत्र थे। बडे श्री चौधरीराम सखूजा। श्री चौधरी राम सखूजा प्रसिद्ध व्यवसायी, कुशल व्यापारी, पैतृक (गद्दी) को बढ़ानेवाले व्यवहार दक्ष व्यक्ति थे। मुझे एक बार उनके साथ लम्बा सफर करने का अवसर मिला। उन्होने रेल डिब्बे के मध्य में सुरक्षा कारण से सीट चुनने का महत्व व्यावहारिक रूप में मुझे बताया था। सोते समय उन्होंने विशिष्ट पोटली का तकिया बनाकर सुरक्षा व्यवस्था

thearyasamaj.org

की थी। एक दिन वे भिलाई मेरे निवास आए थे, मेरे साथ रुके थे। तब मै ब्रह्मचारी था। उन्होंने मेरे हाथ सिके परोठे खाकर मुझे उपकृत किया था। उपकृत इस लिए कि बाद भी मेरी चचेरी भाभियों ने उनके द्वारा मेरे पराठों की तारीफ सुनकर मुझसे पराठे बनाने का राज पूछा था। वे खुशमिजाज चुस्त दुरुस्त व्यक्ति थे।

छोटे भाई मेरे पिता श्री लद्धाराम जी ने ओवरसियर कोर्स पास किया हुआ था। वे ओवरसियर (सिविल) थे। उनकी घुमक्कड प्रवृति के कारण मेरा बचपन प्रकृति की गोद मे पला। वे सुशिक्षित थे। बिलासपूर में शोभा यात्रा के प्रवर्तक थे। आर्य समाज बिलासपुर के सर्वसम्मति से सर्वाधिक बार (शायद ३० बार) प्रधान वे चुने गए थे, शायद यह विश्व रिकार्ड होगा। ग्रामों में धर्म प्रचार, पशुहत्या निषेध, शुद्धि आन्दोलन उनके कार्यक्षेत्र थे। उदारता तथा उनकी मेहनत का कोई सानी न था। उदारता उनका जीवन मंत्र था। अपने बड़े भाई से कुछ भी न पाकर उन्होंने बड़े भैया के बिलासपुर आने पर पूरा व्यवसाय सम्पति एवं स्थायीत्व दिया। उनका अपार ममत्व इतना था कि हमारी बनिहार का सुखमद परिवार मुझे अपना गृह सदस्य ही समझता था। सारे श्रमिक बनिहार उनका परिवार थे। आर्य समाज के वार्षिकोत्सवों में पूरा आर्य समाज मानो हमारे घर में ही सिमट आता था। मां सब बनाती थीं। हम सब अनथक भोजन नाश्ता बांटते थे तथा ज्ञान लूटते थे।

मेरे और भैय्या (श्री कृष्णबलदेव जी सखूजा) में उम्रान्तर परमात्मा ने बनाया था पर हम परमात्मा पर प्रबल रहे। मुझे स्मरण है गुजरांवाला गांव में एक घोड़ी पर से गद्दे समेत साथ गिरना, गन्ने के खेतों मे मोंरो के पीछे साथ-साथ भागना और उनके पंख गिराना, फलो के बगीचे में फल खाना, कड़ाहों से उबलता उबलता एक पत्तल में गुड़ खाना बूंदी, कोटा, चक, उमेठ में इमली के पेड़ो पर एक साथ चढ़ना, खिरनी बटोरना, बंदर भगाना, बिलासपुर गेंद बनौला खेलना, उनका गेन्द गिराने दौड़ना, मां छाया में दौड़-दौड़ निवार बुनवाना, उनका मेरे खेल मैदान आ "आ ओए काकेआ" बुलाना, पच्चीसा नौगोटियां खेलना, साथ तेल मालिश कराना, बदन पर राख मलना, भाभी से दुबारा आटा मलवाना आदि। मैं काका वो भापा जी हम टू इन वन रहे। वे आठवीं पास पैतृक सम्पत्ति नियामक रहे। मैं पढाकू नौकरी पेशी सौ केन्द्रो के माध्यम से धर्म प्रचार प्रसार में रत रहा।

thearyasamaj.org

श्री चौधरी रामजी के दो बेटे, एक चमनलाल सखूजा दूसरे रामशरण दास सखूजा। चमनलाल जी ने व्यवसाय सम्हाला समान्य पढाई के बाद। रामशरण दास डॉक्टर तथा मानवतावादी। गांवों में देवता वत पूजे जाते थे। पर्चों के माध्यम से धर्मप्रचार करते थे एवं दवाइयां देते थे।

दो भाई परम्परा टूटी नहीं है नए जमाने में भी। मुकेश सखूजा बड़ा भाई व्यवसाई राकेश सखूजा छोटा भाई नौकरी पेशा। इनके भी दो दो बेटे हैं। आनंद सखूजा के दो बेटे बिलकुल मेरे चाचा जी तथा पिताजी जैसे। बड़ा गौरा छोटा श्यामल। बडा व्यापार कदम चलने वाला छोटा चार्टड एकाउंटेंसी कर रहा। अरविन्द सखूजा के दो बेटे और मेरे भी दो बेटे हैं। बड़ा पढाई में अपेक्षाकृत कमजोर छोटा तेज। इन सबसे छोटा को मानवता वादी ज्ञान अर्जन के क्षेत्र में बढ़ाना ही है।

यह घराना पैसा कभी (नन्हे अपवाद को छोड़) नहीं रहा। यह घराना रिश्ता घराना रहा। मेरे पिताजी का शुचि को भंमीरो कहना, मेरे भतीजे, भतीजियों, बहू, दामदों का मुझे भापा कहना मेरे चचरे भाईयों का मुझे भापा कहना, सारे बनिहारों का घर सदस्यवत होना, आर्य समाज सदस्यों का परिवार, कौशल भाभी का अथाह ममत्व, भाभी से मनुहार, आभा का बचपन में अज्ञात भाषा व लम्बी कविताएं करना, मेरे साथ उन्मुक्त दौड़ता व्यवहार, सहेलियों के साथ मेरा खेलना, उनका नकली पत्ता भोजन करना, बबली, आभा, विभा के बच्चों का भी मुझे भापा कहते मेरे साथ खेलना लढ़ना, सारी बहुओं का भाभी बहू होना। मेरी सगी बहनों चचेरी बहनो में मुझे कोई असर नजर नहीं आया है। मेरे भांजे भांजियां मेरी पत्नी को भाभी ही कहते हैं भतीजे भतीजियों के समान। मेंरी भाभी परिवार (रायपुर) के सारे बच्चे भी मुझे भापा ही कहते हैं। नागपुर परिवार का भी मैं गहन गहन सदस्य हूं। मेरा ससुराल मेरा घराना सदस्य अपेक्षकृत कम है पर मुझसे घनिष्ट है। इस घराने का नाम ही एक रिश्ता है। तनिक से अपवाद छोड दें तो रिश्ते अमर प्रभावशील हैं, समुद्रवत हैं। जमीन जायजाद तो मात्र लहरें हैं, अस्थायी है।

–स्व.डॉ.त्रिलोकीनाथ जी क्षत्रिय

सांतसा न्यास के लिए इस मासिक पत्रिका का प्रकाशन सम्पादक ब्र. अरुणकुमार "आर्यवीर" द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित कराया गया। मुद्रक : प्रिंटकॉन, अहमदाबाद ☎ ०७९–३२९८३११८